RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-05
May-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

प्राचीन काल में दास धर्म

भारत कुमार मण्डल

शोधार्थी, संस्कृत विभाग, ल0ना0मि0विश्वविद्यालय, दरभंग–846004(बिहार)

ऋग्वेद के अनेक मंत्रों में दासों एवं दासियों के उल्लेख मिलते हैं। किन्तु कहीं भी उसका उल्लेख गुलाम के रूप में नहीं होता है। दासियाँ विभिन्न प्रकार के गृहकार्य के लिए सम्पन्न वर्ग के लोगों द्वारा रखे जाते थे। अर्थात् आज की नौकरानियाँ या दाँई उस काल की दासी थी। गृहकार्य के लिए दासियों का प्रयोग होता था और कृषि कार्य के लिए दास का उपयोग होता था अर्थात् समृद्ध समाज की आर्थिक उत्पादन का मूल साधन दास और दासियाँ ही थी। विश्व के संदर्भ दास या दासियों का अर्थ गुलामों से होता था जिनकी बोलियाँ लगती थी, निलामी होते थे और बाजारों में खरीद–बिक्री होती थी, पशुवत व्यवहार किये जाते थे किन्तु भारत के संदर्भ में दास और दासियों के साथ पारिवारिक सदस्यों जैसा व्यवहार होता था एवं वे परिवार के प्रबन्धक के साथ–साथ सलाहकार भी थे।

धर्मसूत्र तथा जातक कथाओं में भी दास–दासियों के विविध प्रकार का उल्लेख मिलता है और उनके कार्यो के साथ–साथ किये जाने वाले व्यवहार आदि के विवरण मिलते हैं। मिथिला में उन्हें दान–दक्षिणा एवं दहेज में देने की प्रथा थी। बंधक रखा जाता था तथा दूसरे के यहाँ भाड़े पर काम करने के लिए भेजा जाता था। जनक की सभा में याज्ञवल्क्य को दिये गए स्वर्णमंडित गायों के साथ दास भी देने का उल्लेख मिलता है। सीता स्वयंवर के पश्चात् जब अयोध्या गई तो उनके साथ सैकड़ों दासियाँ भी गई थी आज भी मिथिला में जब लड़कियाँ पहली बार ससुराल जाती है तो उसके साथ 'लौकनी' के रूप में खवासनी अर्थात् नौकरानी को भेजा जाता है।

मौर्यकाल में दासप्रथा सामाजिक संरचना का आधार बन गया था। उनका शोषण होने लगा था। परिणामस्वरूप कौटिल्य ने अपने अर्थशास्त्र में उनके कल्याण के लिए अनेक नियमन दिये।[1] अशोक के अभिलेख में भी उनके प्रति मानवीय व्यवहार करने पर बल दिया था।[2] मौर्योत्तर काल के स्मृतिकारों द्वारा दास–दासियों के लिए बनाये गये नियम कौटिल्य के नियमों से भिन्न तथा तुलात्मक दृष्टि से अनुदार थे। मनु के अनुसार शुद्र को वेतन देकर या बिना वेतन के भी उससे दास–कर्म कराया जाता था।[3]

दासों की भाँति दासियों का भी सामाजिक व्यवस्था में प्रावधान था। सामर्थ्यवाान घरों में दासी रखने की परम्परा मिथिला में विद्यमान था जिसे खवासनी कहा जाता था। अभिज्ञानशाकुंतल में शंकुतला को उसके पति राजा दुष्यन्त के घर को भेजते समय कण्व ऋषि ने यह शिक्षा दी 'राजप्रसाद' में दास–दासियों के साथ स्नेहपूर्ण व्यवकार करना। हर्ष भी अपने नाटिका प्रियदर्शिका में महरानी के अंतःपुर की परिचारिकाओं तथा सेविकाओं का उल्लेखा करता है। मत्स्यपुराण में रानी भानुमती के विषय में उल्लिखित है कि वह दास रानी भानुमती के विषय में उल्लिखित है कि वह दस हजार दासियों के बीच शोभायमान रहती थी।

मिथिला में दासी को 'खवासनी' कहा जाता था। वैस नारदसंहिता में दासियों के प्रकार का उल्लेख मिलता है। बंधकी कुंभदासी गर्भदासी जन्मदासी प्रेष्यदासी तथा परिचारिका का उल्लेख मिलता है। कुंभदासी के जिम्मे पानी भरने का काम था इसे निम्न कोटि के श्रेणी में रखते हैं। भरत मुनि के अनुसार शैया की रक्षिका, राजा के छत्र, चंवर एवं व्यंजन रखनेवाली सुगंधित द्रव्यों तथा आभूषणों का संयोजन करनेवाली और वस्तुओं का यथास्थान पहुँचाने वाली (दासी) परिचारिका कहलाती है। मिथिला के विवेच्यकाल में अन्य वर्गो की दासियों का उल्लेख साहित्यिक ग्रंथों में मिलता है।

अमीर घरों में या राजा रजवारों में दासियों के जिम्मे केश–विन्यास, अंगराग एवं विलेपन लगाने जैसे कार्य थे। वे धात्री का भी काम करती थी। रघुवंश में इसका उल्लेख मिलता है। वाणभट्ट की कादम्बरी के एक संदर्भ में उल्लेख आया है कि रानी के गर्भवती होने की सूचना सर्वप्रथम वही देती थी। धात्री को जन्या भी कहा गया। युवावस्था में धात्री युवक को रति–रहस्य की जानकारी देती थी।

कुछ दासियाँ नृत्य एवं संगीत में भी कुशल होती थी। दास–दासियों की सामाजिक–आर्थिक स्थिति प्रायः दयनीय होती थी। उन्हें अपने स्वामी के अनुसार चलना होता था। स्वामी के विरूद्ध विद्रोह करने पर मृत्युदंड भी मिल सकता था। मनु का कथन है कि 'राजा अपने पुत्रों को जिस मानदण्ड से शारीरिक दण्ड देता है, उसी के अनुरूप दासी को भी दंड दें।' किन्तु यह मात्र सिद्धान्त ही था। उन्हें बचा–खुचा भोजन खाना पड़ता था। थोड़ी सी भी भूल करने पर शारीरिक दण्ड दिया जाता था और कभी–कभी जंजीरों से भी बाँध दिया जाता था। किन्तु अर्थ दंड नहीं दिया जाता था।

दास–दासी की कोई व्यक्तिगत स्वतंत्रता नहीं थी मिथिला में उसे 'बहिया; कहा जाता था। वे स्वामी के अधीन होते थे। स्वामी उन्हें बेच सकता था, बंधक रख सकता था,

RRIJM 2015, All Rights Reserved

उधार दे सकता था, तथा दान भी कर सकता था। मिथिला में दास 'जनौड़ी' लेकर मालिक के प्रति समर्पित हो जाते थे जिन 'जन' कहा जाता था। आज के संदर्भ में इसे बंधुआ मजदूर कहा जाता है। दासों की निर्धनता एवं परतंत्रता के कारण महाजन उन्हें ऋण नहीं देते थे। किन्तु मालिक के अनुपस्थिति में वह ऋण ले सकता था। जिसके अदायगी का जिम्मा स्वामी का होता था। दासियों को मालिको द्वारा उन्हें रखैल बनाकर रखना एक सामान्य बात थी। नारद ने तो अपने से निम्न जाति की दासी को वैधानिक रूप से 'गम्या' कहा है। किन्तु दासियों के अपहरण करनेवालों को कठोर दंड का विधान था। दूसरे की दासी की कन्या के साथ उसके स्वामी के आज्ञा प्राप्त किये बिना संभोग करनेवाले व्यक्ति के लिए नारद ने केवल दो पण प्रतिदिन के अर्थदण्ड का प्रावधान था। जबकि स्वच्छन्द दासी से संभोग करनेवाले से 10 पण लेने का नियम था।

मिथिला की सामाजिक व्यवस्था में दासता वास्तव में एक अभिशाप माना जाता था। दास–दासी अविश्वसनीय माने जाते थे और पूर्वजन्म के पापों के फल के रूप में स्वीकार कर लेते थे। दासी पुत्र का प्रयोग गाली के रूप में होता था। शांतिपर्व में दासों को कुत्ते, भेड़िये और पशुओं की श्रेणी में रखा गया है। हर्षचरित में भी उन्हें हतभाग्य अधोगतिक और दारुण्य की प्रतिमूर्त्ति के रूप में उल्लेख मिलता है।

दास–दासियों की स्थिति उनके कार्यो के आधार पर उनका मूल्यांकन किया जाता था। दासों के कार्यो से प्रसन्न होकर उनके स्वामी उन्हें अपने नौकर–चाकरों का मुखिया बना देता था या स्वतंत्र कर देता था। कात्यायन एवं नारद ने दास द्वारा अपने परिवार के भरण–पोषणार्थ के लिए गए ऋण की अदायगी के लिए उसके स्वामी को उत्तरदायी ठहराया है। किन्तु मानवीय दृष्टिकोण से उन्नत स्वामी ही ऐसा करते होंगे।

मिथिला की सामाजिक व्यवस्था याज्ञवक्ल्य स्मृति से निर्देशित होती है। याज्ञवल्क्य ने दासी से उत्पन्न शुद्र पुरूष के पुत्र को अपने पिता की सम्पत्ति का वैधानिक अंशग्राही नहीं स्वीकार किया। उन्होंने यह भी उल्लेख किया है कि पिता के मृत्यु के पश्चात् परिणित पत्नी से उत्पन्न दासी पुत्र को सम्पत्ति का आधा भाग दे देना चाहिए और विवाहिता पत्नी के पुत्र एवं विवाहिता पुत्रियों तथा उनके पुत्रों के अभाव में दासी पुत्र समस्त सम्पत्ति का स्वामी बनेगा। स्वामी के प्राणों का रक्षा करनेवाला दास को नारद ने स्वामी के सम्पत्ति में पुत्रों के समान अधिकारी माना है।

मिथिला में दासियों का काम अलग किस्म का था। ये घर के सारे कार्य करती थी और ये भी बहिया श्रेणी में आती है। बहिया पति–पत्नी और बाल–बच्चे अपने स्वामी के यहाँ पीढ़ी दर पीढ़ी कार्य करते हुए चले आते थे। जिसके बदले उसकी सम्पूर्ण योगकक्षेम की जबावदेही स्वामी पर रहता था और बहिया–बहिकरणी एक तरह से घर के सदस्य हो जाते थे। उनके साथ आत्मीय सम्बन्ध हो जाता था था। अन्य जगहों की अपेक्षा मिथिला में इन लोगों की स्थिति तुलनात्मक दृष्टिकोण से अन्य जगहों से अच्छी थी।

दासत्व से मुक्ति पाना दुरह कार्य था। अधिकांशतः दासता पीढ़ी–दर–पीढ़ी तक चलती थी। मनु के अनुसार स्वामी द्वारा मुक्त किये जाने पर भी शूद्र दासता से छुटकारा नहीं पाता है क्योंकि दासत्व उसका स्वाभाविक कर्म है। मालिक स्वेच्छा से दास–दासी को मुक्त कर सकते थे। दासों के मुक्ति संबंधी सर्वाधिक विस्तृत विवरण नारद स्मृति में प्राप्त है। नारद के अनुसार मालिक के घर में उत्पन्न क्रीत, दान में प्राप्त तथा उत्तराधिकार में मिले दासों को केवल उनके स्वामियों के इच्छा एवं अनुकुलता से ही दासता से मुक्ति मिल सकती है। दुर्भिक्ष के दौरान बना दास अपने स्वामी को एक जोड़ा गाय देकर बंधक रखा गया दास धारक धन की अदायगी करने पर, ऋण के कारण बना दास ब्याज सहित ऋण चुकाने पर, निश्चित कालावधि के लिए बनाया गया दास उस अवधि के समाप्त होने पर आत्म विक्रयी, युद्ध बंदी तथा जुएँ में हारने के कारण बना दास उपयुक्त स्थानापन्न देने पर, भरण–पोषण के लिए बने दास की मालिक पर भोजन की निर्भरता समाप्त होन पर और दासी से यौन संबंध रखने के कारण बना दास उस दासी से संबंध विच्छेद कर लेने पर स्वतंत्र हो जाता है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर हम देखते हैं कि मिथिला में दास–प्रथा अन्य जगहों से थोड़ा भिन्न था। मिथिला के सामाजिक संरचना में सभी वर्णो के आपसी संबंध सौहार्दपूर्ण थे। साथ ही समाज और गाँव आत्म निर्भर था और एक दूसरे से लोग जुड़े हुए थे। जिसके परिणामस्वरूप मिथिला में दास–दासियों को कुछ स्वतंत्रता भी थी। इसलिए इसका बुरा प्रभाव मिथिला के सामाजिक परिदृश्य में देखने को नहीं मिलता है।

दास प्रथा– मानव समाज में प्राचीन समय से ही दासता की प्रथा रही है। दास प्रथा को संस्थात्मक शोषण की पराकाष्ठा कहा जा सकता है। एशिया, अमरीका अफ्रीका, यूरोप आदि सभी भूखंडो में उदय होने वाली सभ्यताओं के इतिहास में दासता ने सामाजिक राजनीतिक तथा आर्थिक व्यवस्थाओं के निर्माण एवं परिचालन में महत्त्वपूर्ण योगदान किया है जो सभ्यताॅए प्रधान रूप से तलवार के बल पर बनी, बढी और टिकी थी, उनमें दासता नग्न रूप में पायी जाती थी।

मिथिला समाज में इस प्रकार यह प्रथा एक सामाजिक बुराई के रूप में व्याप्त है समाज में कुछ लोगों द्वारा स्वंय को उच्च व अधिक अधिकार प्राप्त होने का दावा किया जा रहा है। उन्हे सार्वजनिक स्थानों पर जाने से रोका जाता रहा है उन्हें कुॅओं से पानी भरने की अनुमति नही थी, उन्हें मन्दिरों में जाकर पूजा करने की अनुमति नही थी। समाज से इस प्रकार की प्रथाओं को दूर कने के लिए भारतीय संविधान में इन सभी को दण्डनीय घोषित किया गया। इसके बाद समाज में यह प्रथा के धर्म के आर्थिक या अन्य किसी भी सामाजिक आधार

पर भेदभाव समाप्त होने लगा। इस व्यवस्था की जड़ें अब ढीली होती जा रही है। वर्षो से शोषित लोगों के उत्थान के लिए सरकार उच्च स्तर पर कार्य कर रही है। संविधान के द्वारा उनको विशेष अधिकार दिए जा रहे है। उन्हें सरकारी पदों और शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश प्राप्ति में प्राथमिकता और छूट दी जाती है ।

दास प्रथा विश्व की कई प्राचीन सभ्यताओं के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन का अभिन्न अंग रही है। भारत में सबसे पहले सिंधु सभ्यता के काल में दास प्रथा के प्रचलित होने के कुछ साक्ष्य मिले है। मौर्य काल में दास प्रथा अधिक व्यापक हो गयी थी साथ ही दासों की संख्या में भी पर्याप्त वृद्धि हुयी थी और उनकी स्थिति में भी गिरावट आयी थी, इसलिये कौटिल्य ने उनके कल्याण के लिए कई नियम बनाये। युद्ध–बन्दी प्रायः दास बना लिये जाते थे। अपना ऋण चुकाने में असमर्थ, जुएं का ऋण न चुका सकने वाले जुआड़ियों को गुलाम बनना पड़ता था। कई बार दुर्भिक्ष के समय लोग अपने आपको बेंच देते थे।

प्रारंभ में दासता का प्रावधान केवल शूद्रों के लिए था। परन्तु कात्यायन का मानना है कि ब्राह्मण के अतिरिक्त अन्य तीनों वर्णो के लोगो को दास बनाया जा सकता है। लेकिन यह अनुलोम क्रम में ही हो सकता है। याज्ञवल्क्य ने यह भी विधान किया कि जो भी सन्यास के नियम भंग करे वह दासता की स्थिति के प्राप्त करेगा।

दास–दासियों की स्थिति बड़ी दयनीय होती थी। उन्हें अपने मालिको को हर ज्ञान का पालन करना होता था लेकिन मालिक का अपने दास के केवल तन पर अधिकार माना जाता था न कि उसके चरित्र और आचरण पर। मृच्छकटिक में एक दास अपने स्वामी से कहता है कि मेरे शरीर पर तो निःसन्देह आपका पूर्व अधिकार है किन्तु मेरा चरित्र–आचरण आपके अधिकार क्षेत्र के बाहर है।

संदर्भ सूचीः–

1. अर्थशास्त्र–3/13
2. अशोक का शिलालेख–9, 11,13 तथा स्तम्भ लेख–7
3. मनुस्मृति–8/413

RRIJM 2015, All Rights Reserved